मातृज्योति-परा

श्रीश्रीमाँ सर्वाणी

आद्याशक्ति महामाया लीलामयी। वे बन्धन और मोक्ष की कर्त्तृ हैं। उनकी माया से आबद्ध होकर ही जीव पारिवारिक गृहस्थ धर्म में प्रवृत्त होता है। पुनः उसकी कृपा से ही संसारी जीव मुक्तिलाभ कर पाता है। इसीलिए वे माया और महामाया दोनों ही हैं। जो वाक्य, मन और इन्द्रियातीत हैं, जो त्रिगुण होकर भी त्रिगुणातीत हैं, जो निर्गुण परमब्रह्म की चितिशक्ति के रूप में अगम्य और अपरम्पार, उस आद्याशक्ति की उपलब्धि करने की साधना ही है मातृ-साधना। महाज्ञानी गण जिसे 'परमात्मा' कहते है मातृ साधकगण उसे ही 'माँ' के नाम से पुकारते हैं। 'माँ' शब्द या मंत्र लघु होने पर महाशक्तिमयी और मधुर है। इसीलिए भक्तियोग की प्राथमिक सोपान की साधना में वात्सल्य-रस की साधना की सूचना मिलती है। इस वात्सल्य में प्रेम और भक्ति उभय का समाहार है। वात्सल्य में प्रेम, स्नेह-ममता, महाभावमय विशुद्ध ज्योतिर्मय। दिव्य मातृसत्ता और दिव्य शिशु सत्ता एक अपरिच्छिन्न चिरन्तन संबंध है। जैसे पार्वती पुत्र गणेश, कौशल्या तनय राम, देवकी सुत या यशोदानंदन कृष्ण, रोहिणी पुत्र बलराम, शची पुत्र विश्वंभर श्रीकृष्ण चैतन्य इत्यादि।

पूर्ण परमब्रह्म से समुद्भूत परासंवितमयी प्रथम ऋत स्पंदिता स्थिर छन्दिता शक्ति हुई 'कुमारी माँ'; इसी कुमारी शक्ति के हृदय गुहा से एक परम पुरुषोत्तम आविर्भूत हुए, जो हैं आदि पुरुषोत्तम 'कृष्ण' भगवान आदि भगवत् सत्ता पूर्ण-ब्रह्म। इस पुरुषोत्तम नित्य कृष्ण के स्वयं को ईक्षण करने की इच्छा से उनके संबोधि केन्द्र हृदय से स्वभाव रूपी आह्लादिनी महाभाव संपन्न चितिशक्ति परमाप्रकृति रूप में भगवती 'राधा' देवी आविर्भूत हुई। यही कारण है कि राधा का एक अन्य नाम 'श्रीमति' भी है; 'श्रीमति' 'श्री' संपन्न 'मति' जिनकी; वे प्रकाश या ईक्षण शक्ति रूपी विशुद्धमति संपन्न कृष्ण की 'श्री' अर्थात् माधुर्य रूपिणी। श्रीकृष्ण की सत् इच्छा रूपी अस्तित्वबोधक सहजात ब्रह्मप्रकृति से आविर्भूत हुई हैं इसीलिए ये हैं, पूर्ण परमब्रह्म स्वरूप की पूर्ण परमा प्रकृति सत्ता। पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण हैं पूर्णब्रह्म के समष्टिभूत सच्चिदानन्दघन सगुण विग्रह। इस पूर्ण परमब्रह्म पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण से परमब्रह्ममय निर्वाणरूपमय सर्वप्रथम जो आदि देव-विग्रह आविर्भूत हुए वे हैं 'पुरुषं कृष्ण पिंगलं' देवादिदेव महादेव शिव-ब्रह्म। इस शिव-ब्रह्म के ओंकाररूपी नादात्मक अंग से उनकी परमाप्रकृति सत्ता का आविर्भाव होने पर परम ब्रह्मरूपी शिव हुए अर्द्धनारीश्वर और उनकी प्रकृति सत्ता हुई आनन्दस्वरूपा अर्द्धनारीश्वरी या नादात्मिका ओंकारेश्वरी 'उमा'।

यही उमा है आद्याशक्तिरूपिणी 'आद्यामाँ', आदि अखंड माँ। इसी उमा के दक्षपुत्री 'सती' के रूप में मृत्युलोक में आविर्भूत होने पर भगवान शिव ने भी धराधाम पर अवतार ग्रहण किया। तप-बल से सती ने देवादिदेव शिवशंकर को पति के रूप में प्राप्त किया। तत्पश्चात् दक्ष-यज्ञ में सती ने देहत्याग कर हिमालय और मेना के गृह में पार्वती के रूप में जन्म ग्रहण किया एवं कठोर तपस्या कर पुनः शिव को पति के रूप में प्राप्त किया। पार्वती देवी ने पुत्रकामना से एक अत्योद्भूत महापुण्यशील तपोलब्ध यज्ञ और व्रत का पालन किया था; उस व्रत और यज्ञ के अनुष्ठान का पौरोहित्य स्वयं ब्रह्मर्षि सनत्कुमार ने किया था। जिसके फलस्वरूप स्वयं पूर्णब्रह्म श्रीकृष्ण उनके पुत्र-रूप में ब्रह्मांड के समस्त गणों के अधिपति बनकर गणेश के रूप में आविर्भूत हुए। तत्पश्चात् एक और अभिनव निदर्शन हुआ मनु और शतरूपा की तपस्या। जिसके परिणाम स्वरूप त्रेतायुग में दशरथ-कौशल्या-नंदन के रूप में भगवान श्रीराम ने पूर्णब्रह्म के रूप में जन्म ग्रहण किया। पुनः उसके बाद द्वापर में अवतरित हुए वसुदेव, देवकी, रोहिणी पुत्र, वासुदेव, श्रीकृष्ण, बलराम। तत्पश्चात् कलियुग में पूर्णब्रह्म नित्य कृष्ण का अवतार हुआ, आद्याशक्ति रूपिणी शची माता के

गृह को आलोकित करते हुए। 'निमाइ' (विश्वंभर) नाम से भगवान ने जन्म ग्रहण किया, परवर्त्तीकाल में जो हुए भगवान श्रीकृष्ण चैतन्य। इनके अतिरिक्त चार युगों में और भी हरि-नारायण के अनेक अवतार इस मृत्युलोक में हुए हैं। सभी क्षेत्रों में यह दर्शित हुआ है कि उनके माता-पिता को कठोर तप बल से भगवान स्वरूप पुत्र या कन्या की प्राप्ति हुई।

इस क्षेत्र में एक विषय विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। पूर्णब्रह्म सनातन भगवान सत्ता, जब देह धारण करते हैं, तब मूल आद्याप्रकृति को अवलंबन कर ही शरीर ग्रहण करते है। जैसे - पार्वती-पुत्र गणेश, देवहुति-कन्या अरून्धती, शची-पुत्र श्रीचैतन्य, कलावती(कृतिका)-कन्या श्रीराधा इत्यादि। भगवत्वेत्ता स्वरूप परमब्रह्म के प्रतिभू जब आविर्भूत होते हैं, तब वे मूल आद्याप्रकृति या आद्याप्रकृति-अंश सम्भूता को अवलंबन कर ही अवतरित होते हैं। जैसे – पार्वती-पुत्र कार्त्तिकेय, सुजाता-पुत्र परशुराम, देवहुति-पुत्र कपिल, मेरूदेवी-पुत्र ऋषभदेव, मायादेवी-पुत्र गौतम बुद्ध, मेरी-पुत्र यीशु, विशिष्टादेवी-पुत्र रुद्रावतार आदिशंकराचार्य, फातिमा-पुत्र सूफी अब्दुल कादिर जिलानी (इराक) इत्यादि।

जो भगवत्-सत्ता और भगवत्-वेत्ता गणों की जन्मदातृ जननी हैं, जो महात्मागणों की जन्मदातृ माताएँ हैं वे केवल इस जगत् की ही नहीं वरन् इस ब्रह्मांड की परम प्रणम्या हैं। उन सभी मातृगणों ने किसी न किसी जन्म की अनन्त सुकृति और पुण्य तप-बल से ईश्वरात्मा को गर्भ में धारण कर रत्नगर्भा के आसन को अलंकृत किया है। ये सभी मातृ ज्योति से पुण्या और धन्या हैं। माया की परिधि में रहकर इन सभी मातृगणों की वात्सल्य की आराधना अवश्य ही पूर्ण हुई है। इसीलिए शास्त्रों में उद्धृत है - ''जननी जम्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'' – जननी परमाप्रकृति मंगलदायिनी माँ।

दिव्य जननी परासंवितमयी 'कुमारी माँ' अखंड-कालशक्ति रूपिणी मातृसत्ता करालवदना 'काली'। इस मातृसत्ता की एक साधक के जीवन में वात्सल्य रस के परम प्रकाश की एक सत्य घटना को यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है –

''कृष्णानंद आगमवागीश रात-दिन मातृध्यान में विभोर रहते थे। प्रत्येक अमावस्या की रात में जगत् जननी आदिष्ट विग्रह को वे अपने हाथों से निर्मित करते। माँ की पूजा समाप्त कर वे गंगाजल में उस देवी विग्रह को विसर्जित कर देते। यह गुप्त पूजा परम श्रद्धा एवं शुद्धाचार देह से अनुष्ठित होती। देवी सेवा-पूजा का उपाचार और उपकरण के संग्रह में कृष्णानंद के उत्साह का अभाव कभी भी लक्षित नहीं हुआ।

उस दिन अमावस्या तिथि थी। गहन रात्रि में कृष्णानंद की श्यामापूजा अनुष्ठित होगी। इसीलिए प्रातःकाल से ही उनके अंतःस्थल में असीम उत्साह व उद्दीपना है। पूजा-उपकरण संग्रह हेतु गृह-संलग्न उद्यान में वे इधर-उधर घुम रहे हैं। हठात् उन्होंने देखा, समीप के ही एक कदलीवृक्ष में केले का एक पूरा घौद (काँदि) अच्छी तरह से परिपक्व हो गया है। इस समय इस प्रकार का उत्कृष्ट कदली सहसा आप्राप्य होता है। कृष्णानंद का मन खुशी से आप्लुत हो गया। उन्होंने सोचा कि आज रात्रि में माँ की पूजा और भोग के रूप में इन सब का उपयोग करूँगा। सायंकाल में समय पाकर इस केला के घौद (काँदि) को वृक्ष से उतार कर ले जाऊँगा।

दिवसावसान में उस बगीचे में प्रवेश करने पर उनके पीड़ा की सीमा नहीं रही। सुपक्व केलों को न जाने कौन इसी बीच काटकर ले गया। मन में बहुत दुःख एवं अनुताप हुआ क्योंकि संकल्पित वस्तु को माँ के भोग हेतु अर्पित नहीं कर पाया।

घर जाकर कृष्णानंद ने सुना, भ्राता सहस्राक्ष ने उन केलों को अपने इष्ट-विग्रह की पूजा में निवेदित किया है। गोपाल के भोग में उन सभी केलों को अभी तुरंत ही अर्पित किया गया था। भ्राता को कुछ भी उलाहना न देकर मन की व्यथा को उन्होंने मन के भीतर ही दबाकर रखा।

मध्यरात्रि में श्यामापूजा का अनुष्ठान संपन्न हुआ। कृष्णानंद ध्यान में डुबे, किन्तु आज ध्यान ठीक से एकाग्र नहीं हो रहा था। बारंबार उन्हें उन सुपक्व केलों की घटना याद आ रही थी। भीतर ही भीतर अनुताप भी कुछ कम नहीं था। निज गृह की वस्तु को जगन्माता को निवेदन करने का संकल्प किया था, परन्तु उसे किसी अन्य ने अर्पित कर दिया! यही नहीं वह माँ के भोग में निवेदित न होकर गोपाल की पूजा में अर्पित हो गया। भ्राता सहस्राक्ष आराधित इस गोपाल विग्रह को कृष्णानंद विशेष महत्व नहीं देते थे। उनकी अपनी इष्टदेवी ब्रह्ममयी श्यामा माँ की तुलना में इस बाल गोपाल का महत्व उनकी नजर में वैसा कुछ नहीं था। शक्ति आराधना की तुलना में भक्ति साधना उनकी नजर में हमेशा ही तुच्छ लगती थी। आचार्य के मन

का संताप अभी भी कम नहीं हुआ, इसीलिए उनका ध्यान अभी भी गहरा नहीं हो रहा था। अंत में पूजा गृह का कार्य समाप्त कर, दरवाजा बंद कर आँगन में आकर खड़े हुए। किन्तु यह कैसी आश्चर्यजनक घटना! थोड़ी ही दूर पर अनुज भ्राता सहस्राक्ष द्वारा स्थापित गोपाल विग्रह का कुटीर गहन रात्रि में भी क्यों आलोकित है? सहस्राक्ष क्या अभी तक ध्यान-पूजा कर रहा है?

गोपाल के पूजा-कक्ष में प्रवेश कर कृष्णानंद ने जो दृश्य देखा, उससे विस्मित् होकर वे अवाक् रह गये। उन्होंने देखा, उनकी इष्ट देवी श्यामा माँ बाल-गोपाल को गोद में उठाकर सामने रखी हुई नैवेद्य की थाली से केला उठाकर खिला रही हैं। यह दृश्य जितना अलौकिक था उतना ही प्राणस्पर्शी भी। आगमवागीश की दृष्टि में जो एक आवरण था एक मुहूर्त में ही वह अपसृत हो गया। नवीन चेतना के एक सत्य के आलोक का उद्भास दिखाई पड़ा। उनके हृदय चेतना से श्यामा और श्याम का पार्थक्य बोध उस दिन से चिरकाल के लिए विलीन हो गया। हृदय में उद्गत हुई शक्ति आराधना की उदार सार्वभौम अनुभूति – काली और कृष्ण जहाँ पर एकाकार थे।''

(सहायक ग्रंथ - भारत के साधक)

–हिन्दी अनुवाद : मातृचरणाश्रित श्रीविमलानन्द